पंजीयन संख्या : 68939/98 अंक - 09, वर्ष 24

ज्ञान तत्व

समाज शास्त्र

अर्थ शास्त्र

धर्म शास्त्र

राजनीति शास्त्र

447

-: सम्पादक :-

बजरंग लाल अग्रवाल

रामानुजगंज (छ.ग.)

सत्यता एवं निष्पक्षता का निर्भीक पाक्षिक

पोस्ट की तारीख 15.05.2024

प्रकाशन की तारीख 01.05.2024

पाक्षिक मूल्य - 2.50/- (दो रूपये पचास पैसे)

विविध विषयों पर मुनि जी के लेख

नक्सलवाद पर कांग्रेस का बदलता रुख:

पिछले अंक में हमने कांग्रेस और नक्सलवाद के बीच बनते समीकरणों पर चर्चा की। हमने पढ़ा कि छत्तीसगढ़ के पूर्व मुख्यमंत्री कांग्रेस के प्रमुख नेता भूपेश बघेल ने यह बात स्पष्ट की थी कि जिन 29 नक्सलियों को मारा गया है वह मुठभेड़ फर्जी थी। यही बात कांग्रेस अध्यक्ष दीपक जी ने भी दोहराई, यही बात बाद में सुप्रिया ने भी दोहराई, कांग्रेस पार्टी ने यह बताने का प्रयास किया कि मारे गए लोग नक्सली नहीं थे आदिवासी थे, निर्दोष भी हो सकते हैं। लेकिन 24 घंटे बाद ही कांग्रेस के केंद्रीय नेतृत्व को ऐसा महसूस हुआ कि इस प्रकार की लाइन नुकसान दे सकती है, अब नक्सलवाद का ज्यादा दिनों तक लाभ नहीं उठाया जा सकता। अब देश नक्सलवाद से तंग आ चुका है और मुक्ति चाहता है, जल्दी ही नक्सलवाद भारत से समाप्त हो जाएगा। एकाएक कांग्रेस पार्टी ने अपना स्टैंड बदल लिया। आज उसके सभी नेता इस मुठभेड़ की प्रशंसा करने लगे। यह मुझे ऐसा दिख रहा है कि जैसे मरते समय भगवान याद आता है। इस तरह विपक्ष को भी धीरे-धीरे नई-नई बातें सोचने में आ रही है। कांग्रेस पार्टी ने अंत में अपने घोषणा पत्र में यह भी लिख दिया है कि चुनाव ईवीएम से ही कराए जाएंगे भले ही ईवीएम में थोड़ा संशोधन किया जाए। अभी तक पूरा का पूरा विपक्ष अल्पसंख्यक तुष्टीकरण को ही आधार बनाकर चल रहा था लेकिन पहली बार अरविंद केजरीवाल ने जेल से यह संदेश भेजा है कि अब हमें राम की शरण में जाना है, हम देश में रामराज्य लायेंगे। अरविंद जी ने अपनी पत्नी को जोर देकर कहा है कि तुम हमेशा मंदिर जाओ, राम की शरण में ही जाकर हमारा राजनीतिक उद्धार संभव है। इस तरह मुझे ऐसा लगता है कि विपक्ष को धीरे-धीरे सच्चाई का आभास हो रहा है फिर भी अभी विपक्ष को बहुत सी बातें समझनी है। लगता है कि विपक्ष ने समझदारी में बहुत देर कर दी, फिर भी देर आये दुरुस्त आये।

क्या सचमुच लोकतंत्र खतरे में है ?

भारत में इस बात पर बहुत चर्चा चली कि ‘क्या भारत का लोकतंत्र खतरे में है?’ सभी साम्यवादी मुसलमान और कांग्रेसी लगातार यह बात प्रचारित कर रहे हैं कि

भारत का संविधान खतरे में है, भारत का लोकतंत्र खतरे में है। मैने भी इस विषय पर बहुत विचार किया कि स्थिति क्या है। मुख्य विषय यह है कि जो लोग लोकतंत्र पर खतरा बता रहे हैं, वह यह बात साफ नहीं कर रहे हैं कि आदर्श लोकतंत्र क्या है? साम्यवादियों का लोकतंत्र चीन, रूस, उत्तर कोरिया जैसी जगहों पर दिखता है, क्या यही लोकतंत्र है? मुसलमानों का लोकतंत्र अफगानिस्तान में दिखता है, पाकिस्तान में दिखता है, ईरान में दिखता है, अरब में दिखता है, क्या वह ऐसा ही लोकतंत्र चाहते हैं? कांग्रेस पार्टी का एक लोकतंत्र हमने इंदिरा गांधी के कार्यकाल में देखा था और दूसरा लोकतंत्र मनमोहन सिंह के कार्यकाल में देखा था। मनमोहन सिंह का लोकतंत्र तो पूरी तरह अव्यवस्था थी, जहां वास्तव में अपराधी और गुंडो का ही बोलबाला था तथा इंदिरा गांधी के लोकतंत्र में पूरी तरह तानाशाही थी, क्या कांग्रेसी वैसा लोकतंत्र फिर से भारत में चाहते हैं? एक और लोकतंत्र की बात की जाती है जो अमेरिका ब्रिटेन व फ्रांस में है, इन देशों में भी लगातार अव्यवस्था बढ़ रही है। हमें कुछ नया प्रयोग करना ही होगा। हमें इन लोकतंत्रों की तुलना में एक नए तरह का लोकतंत्र भारत में प्रयोग करना होगा, जिसकी संभावना नरेंद्र मोदी के कार्यकाल में दिख रही है। हम अब तक दुनिया में स्थापित सड़े-गले लोकतंत्र की नकल नहीं कर सकते, इसलिए हम लोग नरेंद्र मोदी के लोकतंत्र का परीक्षण करना चाहते हैं। यदि यह लोकतंत्र भी उसी प्रकार धोखा सिद्ध हुआ जैसा अरविंद केजरीवाल के कार्यकाल में हुआ, मुरार जी के कार्यकाल में हुआ, नेहरू के कार्यकाल में हुआ या अन्य सरकारों के पिछले कार्यकाल में हुआ है तो हम किसी और प्रयोग की दिशा में लगातार बढ़ेंगे लेकिन हम किसी भी रूप में उस सड़ियल लोकतंत्र को नहीं आने देंगे जो कम्युनिस्ट, मुसलमान, कांग्रेसी और पश्चिमी दुनिया के लोग मिलकर भारत पर थोपना चाहते हैं। हम एक नए प्रयोग की प्रतीक्षा कर रहे हैं। आप विश्वास रखिए कि हम पूरी ईमानदारी से लोक स्वराज की दिशा में लगातार आगे बढ़ रहे हैं। हम आपसे निवेदन करते हैं कि हम एक नए लोकतंत्र के प्रयोग के लिए नरेंद्र मोदी का उपयोग करें।

इस प्रश्न का मेरे विचार से लोगों के पास साफ़-साफ़ उत्तर था भी नहीं। जो लोग संविधान और लोकतंत्र पर खतरा बता रहे हैं वे सब या तो कम्युनिस्ट हैं या मुसलमान है या कांग्रेसी है। बाकी भारत में अन्य लोग तो किसी प्रकार से भी लोकतंत्र पर खतरा नहीं बता रहे हैं। हालाँकि यह तीनों ही लोग अपने कार्यकाल में लोकतंत्र के लिए खतरा रह चुके हैं। आखिर साम्यवादी, मुसलमान और कांग्रेसी यह बात क्यों नहीं बताते कि यदि

उनकी सरकार बनेगी तो वे संविधान में संशोधन करेंगे अथवा नहीं? वह लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में बदलाव करेंगे अथवा नहीं? वह अपनी योजना क्यों नहीं बताते हैं कि उनके पास क्या योजना है? विचारणीय प्रश्न यह है कि यदि नरेंद्र मोदी दो-तिहाई बहुमत पाकर संविधान में संशोधन करें तो यह बात उनकी नजर में गलत है और जब उन्होंने सैकड़ो संशोधन कर दिए आगे भी कर सकते हैं तो यह बात लोकतांत्रिक कैसे? मैं आज तक नहीं समझ सका कि भारत के लोकतंत्र पर खतरा कहां है। जब संविधान का मूल ढांचा बदला ही नहीं जा सकता है तो अगर मूल ढांचे को छोड़कर संविधान में अन्य बदलाव संवैधानिक तरीके से होते हैं तो इसमें किसी को क्या आपत्ति हो सकती है? इसमें लोकतंत्र पर खतरा कहां से आ गया, लोकतंत्र पर खतरा तो उस दिन अधिक था जब मूल ढांचा भी बदला जा सकता था लेकिन सन 73 के बाद अब मूल ढांचे में बिना जनमत संग्रह के कोई बदलाव नहीं हो सकता। इसलिए जो भी लोग यह बात करते हैं कि लोकतंत्र खतरे में है, संविधान खतरे में है, वे लोग या तो नासमझ है या स्वार्थी है। उन्हें ना लोकतंत्र का पता है, न संविधान का पता है। मैं फिर भी यह चाहता हूँ कि इस विषय पर हम लोग एक बार और खुलकर चर्चा करें।

फिजूल की चर्चा में फंसी है राजनीति

पिछले लेख में हमने भारत के लोकतंत्र पर चर्चा की। आप अच्छी तरह देख रहे होंगे कि भारत का लोकतंत्र किस दिशा में जा रहा है। 20 दिनों से भी अधिक समय से लोकतंत्र अरविंद केजरीवाल-अरविंद केजरीवाल का खेल खेल रहा है, न्यायपालिका और कार्यपालिका दोनों ही महीने भर से इस खेल में संलग्न है। कितना गंदा लोकतंत्र है कि कई दिनों से इस बात पर चर्चा हो रही है कि अरविंद केजरीवाल जेल में रहकर आम और मिठाई खा सकते हैं या नहीं खा सकते हैं। सरकार के और विपक्ष के सभी बड़े नेता इसी बात में दिन-रात लगे हुए हैं। दिल्ली सरकार के मंत्री भी लगातार यह बोल रहे हैं कि अरविंद केजरीवाल की जेल में हत्या करने की योजना है। साफ तौर पर दिख रहा है कि यह बात पूरी तरह झूठ है लेकिन इस बात को बार-बार दोहराया जा रहा है। अभी कुछ दिनों पहले ही यह बात प्रचारित की गई थी कि अरविंद केजरीवाल का जेल में तीन दिनों में ही 4 किलो वजन घट गया है लेकिन जल्दी ही यह बात झूठ निकली। अरविंद

केजरीवाल को जेल में 20 दिन हो गए हैं और 1 किलो भी वजन नहीं घटा है। मैं नहीं समझ पा रहा कि इतना सफेद झूठ बोलने की आवश्यकता क्या है? मुझे यह भी समझ में नहीं आ रहा है कि अरविंद केजरीवाल जेल में रहकर मिठाई ही क्यों खाना चाहते हैं? और न्यायालय को इसमें क्यों दिक्कत होनी चाहिए? अब न्यायालय सारे मुकदमे छोड़कर सिर्फ इस बात पर विचार करेगा कि जेल में मिठाई खाने देना है या नहीं खाने देना है? यह हमारे लोकतंत्र के दो महत्वपूर्ण स्तंभ सारा काम छोड़कर इस बेहूदी चर्चा में संलग्न है और देश मीडिया के माध्यम से तमाशा देख रहा है। तनिक भी शर्म नहीं आती है हमारी विधायिका न्यायपालिका और कार्यपालिका को जो इस गंदी चर्चा को इतना महत्वपूर्ण समझ रहे हैं।

भारत की जनता खेतों में मेहनत करती है, कल कारखानों में काम करती है, दिन-रात पसीना बहाती है और यह सब करने के बाद जो हम टैक्स के रूप में सरकार को पैसा देते हैं, उस पर हमारे लोकतंत्र के तीनों स्तंभ इस बात पर मजा लेते हैं कि जेल में क्या खाना है और क्या नहीं खाना। अब यह भी एक न्यायालय निर्णय देगा, बेशर्म लोग अपील करेंगे फिर वह निर्णय देगा फिर बेशर्म लोग उच्च न्यायालय जाएंगे। उच्च न्यायालय और हमारा मंत्रिमंडल यही खेल खेलते रहेगा और हम खेतों में मेहनत कर करके इन लोगों को टैक्स के रूप में अपना खून पसीने की कमाई देते रहेंगे। अब समय आ गया है कि इस गंदे लोकतंत्र में सुधार किया जाए, बदलाव किया जाए, कोई नई व्यवस्था लाई जाए और इस गंदे लोकतंत्र से पिंड छुड़ाया जाए।

देश को संविधान सभा की जरूरत:

हम व्यवस्था परिवर्तन में संविधान की भूमिका पर चर्चा कर रहे हैं। हम स्वतंत्रता के बाद ही लगातार संविधान पर समीक्षा करते रहे हैं। हमारा यह मानना रहा है कि संविधान को तंत्र से ऊपर होना चाहिए। तंत्र को ही संविधान संशोधन के असीम और अंतिम अधिकार न हो। दूसरी ओर स्वतंत्रता के बाद संविधान समिति को भंग करके उसे ही लोकसभा मान लिया गया। आज भी कांग्रेस पार्टी कहती है कि भारतीय जनता पार्टी संविधान में मनमाना बदलाव करेगी। भारतीय जनता पार्टी कहती है कि हम ऐसा कोई मौलिक बदलाव नहीं करेंगे। न्यायालय कहता है कि संसद संविधान के मौलिक स्वरूप

में बदलाव नहीं कर सकती लेकिन मौलिक स्वरूप क्या है, यह कभी न्यायालय ने नहीं बताया। हम लोगों का व्यवस्था परिवर्तन अभियान कहता है कि संविधान में एक बदलाव अवश्य होना चाहिए कि "संविधान तंत्र से ऊपर हो" और लोक के द्वारा बनाई गई एक संविधान सभा की संविधान संशोधन में महत्वपूर्ण भूमिका होनी चाहिए। मेरे विचार से यह एक मौलिक बदलाव है और यह होना ही चाहिए। यदि भारतीय जनता पार्टी इस प्रकार का कोई बदलाव करती है तो हम उस बदलाव का समर्थन करेंगे। यदि कांग्रेस पार्टी इस प्रकार संविधान को संसद से मुक्त करती है तो भी हम ऐसे संविधान में बदलाव का पूरा-पूरा समर्थन करेंगे। संविधान को तंत्र से ऊपर होना चाहिए और तंत्र को संविधान में बदलाव का असीम और अंतिम अधिकार नहीं होना चाहिए।

मैं अपने सभी मित्रों से निवेदन करता हूँ कि हम मिलजुल कर वर्तमान चुनाव में राजनीतिक दलों पर इस बात का दबाव बनावें कि वे संविधान में ऐसा संशोधन करें जिससे एक अलग संविधान सभा बनने का मार्ग प्रशस्त हो और संविधान सभा बनाने में आम जनता की भूमिका हो, तंत्र की नहीं।

चुनावों के प्रति आकर्षण घट रहा है:

लोकसभा चुनाव के पहले चरण का मतदान संपन्न हो चुका है। ऐसा पाया जा रहा है कि अनेक क्षेत्रों में पहले की तुलना में मतदान का प्रतिशत कम रहा है। इसका कारण गर्मी बताई जा रही है, मेरे विचार से यह सही कारण नहीं है क्योंकि पिछले सभी चुनाव गर्मी के मौसम में ही हुए थे और अभी तो आगे और गर्मी बढ़ने की उम्मीद है। मुझे ऐसा महसूस होता है कि इस वर्ष जो लोकसभा के चुनाव हो रहे हैं, इन चुनावों में मतदान कम होने का कारण उम्मीदवारों द्वारा खर्च कम किया जाना है। पहले के चुनाव उम्मीदवारों की व्यक्तिगत प्रतिष्ठा के साथ जुड़े होते थे, उन चुनावों में राजनीतिक दल भी बहुत खर्च करते थे लेकिन वर्तमान चुनाव में ईडी ने राजनीतिक दलों की कमर तोड़ कर रख दी है। शहरों में तो वैसे ही कम वोट पड़ते हैं, गांव में शराब और पैसे के बल पर वोट पड़ा करते थे लेकिन इस बार पैसा और शराब कम होने के कारण गांव के लोगों में मतदान के प्रति इतनी रुचि नहीं रही। सच बात तो यह है कि लोग मतदान करने नहीं जाते थे बल्कि उम्मीद्वार अपनी क्षमता के अनुसार मतदान करवाता था, उन्हें गाड़ियों में भर-भर

कर ले जाया जाता था, पैसे दिए जाते थे। इस बार इसका अभाव है। दूसरी बात यह है कि पहले जीतने वाले उम्मीदवार को बहुत अच्छा भविष्य दिखता था कि वह आसानी से खर्च की भरपाई कर लेगा। अब ईडी और सीबीआई नें उस आकर्षण पर चोट की है। चुनाव प्रचार में भी सभी राजनीतिक दल कम खर्च कर रहे हैं। एक तीसरा कारण यह भी है कि सत्ता पक्ष को जीतने की ज्यादा उम्मीद दिख रही है इसलिए वह आश्वस्त है और विपक्ष के उम्मीदवारों को हारने की ज्यादा उम्मीद दिख रही है इसलिए वे भी खर्च करने से डर रहे हैं। परिणाम क्या होगा यह पता नहीं है लेकिन चुनाव के प्रति उम्मीदवारों में और जनता में भी आकर्षण घटा है। यह बात कम मतदान का कारण है।

राजनीति ने साम्प्रदायिकता को बढ़ावा दिया:

दो दिनों में ही कर्नाटक में दो घटनाएं एक साथ घटी। एक शहर में एक मुसलमान नौजवान ने एक हिंदू लड़की को उसके साथ विवाह के लिए तैयार न होने के कारण मार-मार कर उसकी हत्या कर दी। दूसरी घटना में एक मुसलमान लड़के ने कर्नाटक के ही एक शहर में एक हिंदू लड़की को मुसलमान बनाने के लिए जोर-जबरदस्ती की। यहाँ यह गंभीर प्रश्न खड़ा होता है कि भारत में मुसलमानों की कुल आबादी 20% से भी कम है और हिंदुओं की आबादी 75% से भी ज्यादा है। भारत में इस प्रकार हिंदू लड़कियों को अपनी पत्नी बनाने के नाम पर हत्याएं करने या उनका धर्म परिवर्तन के लिए जोर-जबरदस्ती और दबाव डालने का प्रतिशत 80 के आसपास है। जबकि हिंदुओं में ऐसी घटनाएं 7% ही मिलती हैं। एक गंभीर प्रश्न खड़ा होता है कि मुसलमान की आबादी 20% और इस तरह के अंतर धार्मिक संबंधों का प्रतिशत 80 है दूसरी और हिंदुओं का प्रतिशत 5-7 है तो यह प्रश्न सिर्फ युवकों का नहीं है। यह मुस्लिम संस्कृति पर प्रश्न लगता है कि उनके बच्चों के द्वारा हिंसा, संख्या विस्तार और पत्नी बनाने के प्रयत्न के बीच इस्लाम का क्या संबंध है? उन्हें कहां से इस तरह की शिक्षा मिलती है? इस संबंध में यदि आप गंभीरता से सोचेंगे तो बचपन से ही माता-पिता से उन्हें तीनों प्रकार की शिक्षाएं मिलती हैं जब वह बच्चा 7-8 वर्ष का होकर मदरसे में जाता है तो मदरसे की शिक्षा भी उसे उसी प्रकार की मिलती है। मुसलमान धर्म का अर्थ संख्या विस्तार से समझता है, वहीं हिंदू धर्म का अर्थ अपने व्यक्तिगत आचरण से समझता है, यह इन दोनों संस्कृतियों

का फर्क है। इसके साथ-साथ मुसलमानों में इस प्रकार की उच्च भावना के विकास में कांग्रेस पार्टी की भी भूमिका रही है। नेहरू परिवार शुरू से ही मुसलमानों को विशेष सुविधा, विशेष दर्जा, विशेष महत्व देने का प्रयत्न करता रहा है। इस प्रयत्न के परिणाम स्वरूप मुसलमान युवको में एक विशेष सुरक्षा का भाव जागृत हुआ। यदि अब हम इस समस्या का समाधान करना चाहते हैं तो हमें एक तरफ तो मुसलमान के अंदर यह भाव लाना पड़ेगा कि वह संख्या विस्तार को बिल्कुल महत्व मत दें दूसरा नेहरू परिवार को इस बात के लिए तैयार करना पड़ेगा कि अब हिंदू और मुसलमान का भेदभाव छोड़कर सबको समान व्यक्ति के रूप में देखा जाए। सांप्रदायिकता नेहरू के मरने के साथ ही समाप्त हो जानी चाहिए थी लेकिन नेहरू के वंशज आज तक इस सांप्रदायिकता के सहारे अपना राजनीतिक वर्चस्व कायम रखना चाहते हैं। यह राहुल गांधी के लिए भी अच्छा नहीं है, मुसलमान के लिए भी अच्छा नहीं है। कर्नाटक की जो घटनाएं हुई है वह सारे देश का वातावरण सिद्ध करते हैं और साथ-साथ यह भी बताती हैं कि जिस तरह नई सरकार में कश्मीर शांत हुआ, गुजरात शांत हुआ, उत्तर प्रदेश शांत हुआ और यदि कर्नाटक नहीं मानेगा तो धीरे-धीरे वह भी शांत हो जाएगा। मुसलमानों को यह संदेश साफ-साफ समझना चाहिए।

राहुल गाँधी पूरी तरह साम्यवादी हो चुके हैं:

हम कांग्रेस पार्टी और भारतीय जनता पार्टी के मेनिफेस्टो पर चर्चा कर रहे हैं। अब तक विपक्ष नरेंद्र मोदी पर एकपक्षीय आरोप लगा रहा था। विपक्षी दल कभी तो यह कहते थे कि नरेंद्र मोदी अरविंद केजरीवाल की जेल में हत्या करवाना चाहते हैं तो कभी विपक्षी दल कहते हैं कि नरेंद्र मोदी लोकतंत्र की हत्या कर देंगे, संविधान बदल देंगे, तानाशाह बन जाएंगे। पहली बार नरेंद्र मोदी ने भी पलटवार किया और उन्होंने यह स्पष्ट किया है कि राहुल गांधी कम्युनिस्ट और इस्लाम की दिशा में बढ़ रहे हैं, कांग्रेस पार्टी और पूरा विपक्ष इस मामले में राहुल के साथ खड़ा है। अब आरोप-प्रत्यारोप का दौर शुरू हो गया है, इस विषय पर मैंने भी सोचा कि नरेंद्र मोदी ने इतना बड़ा आरोप किस आधार पर लगा दिया। यह बात तो साफ दिख रही थी कि कांग्रेस पार्टी मुस्लिम तुष्टिकरण की दिशा में लंबे समय से चलती रही है। कभी-कभी तो यह संदेह होता था कि कहीं राहुल

गांधी सत्ता के लालच में इस्लाम तो स्वीकार नहीं कर लेंगे लेकिन वर्तमान कांग्रेस का मेनिफेस्टो देखने के बाद, यह बात साफ होती है कि राहुल गांधी इस्लाम की तरफ उतना झुके हुए नहीं है जितना साम्यवाद की दिशा में झुके हैं। जिस तरह पहली बार कांग्रेस पार्टी ने आर्थिक जनगणना करने की बात की है, जिस प्रकार राहुल गांधी ने अपने भाषणों में यह बात कही कि हम देश में इस बात की गणना कराएंगे कि किन लोगों के पास कितनी संपत्ति है? आर्थिक असमानता कितनी है और इस आर्थिक असमानता को कम करने के लिए संपत्ति का उचित विभाजन कैसे होना चाहिए? इन बातों से बिल्कुल साफ होता है कि राहुल गांधी कम्युनिस्टों के चंगुल में बुरी तरह फंस चुके हैं। सांप्रदायिकता राहुल गांधी के लिये इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि साम्यवादियों और सांप्रदायिकता के बीच लंबे समय से एक समझौता है। दूसरी बात यह है कि मैं 20 वर्ष पहले से ही कई बार लिख चुका हूँ कि दिग्विजय सिंह और नक्सलवाद के बीच एक गुप्त समझौता है और यह समझौता राजनीतिक है। जगजाहिर है कि दिग्विजय सिंह ने ही बचपन से राहुल गांधी को प्रशिक्षित किया है इसलिए राहुल गांधी का वामपंथी विचार कोई अप्रत्याशित घटना नहीं है। राहुल गांधी महंगाई और बेरोजगारी पर जितना अधिक जोर देते हैं, राहुल गांधी पूंजीपतियों के विरुद्ध जैसी जहरीली भाषा बोलते हैं, उससे यह साफ हो जाता है कि वास्तव में राहुल गांधी कम्युनिज्म के प्रभाव में हैं। भारत के मतदाताओं को इन चुनावों के माध्यम से यह बात साफ करनी है कि हमें हिंदुत्व चाहिए, हमें गांधी विचार चाहिए, हमें स्वतंत्रता चाहिए ... या इस्लामी सांप्रदायिकता साम्यवादी तानाशाही। मेरा विचार है कि राहुल गांधी और उनका पूरा विपक्ष बहुत गलत दिशा में जा रहे हैं।

वैसे तो सारी दुनिया के लिए साम्यवाद और इस्लाम सबसे बड़ी समस्या बने हुए हैं लेकिन भारत में इन दोनों विदेशी विचारों का गठबंधन अधिक महत्व का है क्योंकि भारत में इन्हें कांग्रेस पार्टी का साथ मिल गया है। इस तरह भारत में कांग्रेस साम्यवाद और इस्लाम का एक त्रिगुट बन गया है और इस त्रिगुट के जाल में देश लंबे समय से फंसा हुआ है। इन तीनों की भूमिकाएं एक साथ मिलकर देश को प्रभावित करती हैं लेकिन तीनों ही अलग-अलग भूमिका में भी होते हैं। कांग्रेस पार्टी राजनीतिक आधार पर देश में अपने को मजबूत करती है तो साम्यवाद वैचारिक आधार पर आम लोगों को प्रभावित करता है और इस्लाम संगठन शक्ति के बल पर देश में अपने पैर फैलाता रहता है। इस तरह वैचारिक, संगठनात्मक और राजनीतिक शक्ति एकजुट होकर भारत में टकरा रहे हैं।

इन तीनों से भारत का हिंदुत्व अकेला टक्कर दे रहा है क्योंकि दुनिया में हिंदुत्व ही एक ऐसा समूह है जो वैचारिक, राजनीतिक और संगठनात्मक सब प्रकार से मिला-जुला है इसलिए यह तीनों मिलकर सीधा हिंदुत्व से टकरा रहे हैं। वर्तमान चुनाव के संदर्भ में साम्यवादी अवधारणा को अपने साथ जोड़कर राहुल गांधी या कांग्रेस को कुछ लाभ हो सकता है लेकिन इस्लाम को जोड़कर कांग्रेस पार्टी बहुत अधिक बेनकाब हो रही है। जिस तरह इन लोगों ने अल्पसंख्यक आरक्षण और बहुसंख्यक नियंत्रण का अपना चुनावी एजेंडा सामने किया यह एजेंडा कांग्रेस पार्टी को निश्चित रूप से नुकसान करेगा। मेरे विचार से हम लोग जो हिंदुत्व के पक्षधर हैं, नरेंद्र मोदी के पक्षधर हैं, भारत के पक्षधर हैं, उन लोगों को विशेष सावधानी बरतनी चाहिए। हमें राजनीतिक आधार पर कांग्रेस का मुकाबला करने की जरूरत है, साम्यवाद और इस्लाम का नहीं वैचारिक आधार पर साम्यवाद का मुकाबला करने की जरूरत है, इस्लाम और कांग्रेस पार्टी के पास कोई वैचारिक आधार नहीं है। संघटनात्मक स्वरूप में इस्लाम से हम टकरा सकते हैं। वर्तमान चुनाव हमारे लिए एक परीक्षा की घड़ी है। हमें पूरी सावधानी से इस त्रिगुट को असफल कर देना चाहिए। यही हमारा धर्म है, यही हमारा राष्ट्र है और यही समाज के लिए भी अच्छा है।

संपत्ति और शक्ति के एकत्रीकरण पर दोहरा रवैया क्यों ?

भारत में आमतौर पर इस बात की सक्रिय चर्चा होती रही है कि भारत के एक प्रतिशत पूंजीपतियों के पास 40% तक संपत्ति केंद्रित है। भारत का हर वामपंथी और कम्युनिस्ट तो इस बात को दिन-रात उछालता ही रहता है। लेकिन आज तक किसी कम्युनिस्ट ने यह चर्चा नहीं की कि भारत की 90% स्वतंत्रता एक प्रतिशत राजनेताओं के हाथों में केंद्रित है। भारत की आम जनता को जो 10% स्वतंत्रता है उसमें भी आर्थिक स्वतंत्रता ही मुख्य है। यह 90% राजनेता और उनके समर्थक लगातार यह 10% स्वतंत्र अर्थव्यवस्था भी विभिन्न तरीकों से सत्ता के पास केंद्रित देखना चाहते हैं। मुझे यह समझ में नहीं आता कि जो लोग 40% अर्थव्यवस्था एक प्रतिशत आबादी के पास होने की शिकायत करते हैं, वही लोग कभी भी यह बात नहीं करते की एक प्रतिशत राजनेताओं के पास 90% तक सामाजिक शक्ति इकट्ठी हो गई है। यह संविधान में बदलाव कर सकते

हैं, यह कानून में बदलाव कर सकते हैं, यह किसी भी व्यक्ति को फांसी पर चढ़ा सकते हैं, किसी भी व्यक्ति को देशद्रोही और देशभक्त घोषित कर सकते हैं। यह हमारे खाने-पीने पर भी प्रतिबंध लगा सकते हैं, यह हमारी संतान उत्पत्ति पर भी नियंत्रण कर सकते हैं। यह राजनेता और न्यायपालिका के लोग मिलकर हमें अप्रत्यक्ष रूप से गुलाम बनाकर रखते हैं और इन नेताओं और न्यायपालिका के चमचे हमारे बीच में हमेशा यह फैलाते रहते हैं कि आर्थिक असमानता समाज की सबसे अधिक घातक समस्या है। सबसे पहले इस बात को गांधी ने समझा था और राजनीतिक सत्ता के विकेंद्रीकरण की बात की थी लेकिन गांधी की बात को अनसुनी करके हमारे कम्युनिस्ट नेताओं ने लगातार इसके विपरीत विचार प्रस्तुत किया। आज भी हम देख रहे हैं कि राहुल गांधी लगातार इस साम्यवादी विचारधारा की ओर बढ़ रहे हैं। जिसमें आर्थिक स्वतंत्रता भी राजनैतिक सत्ता के पास केंद्रित होने की बात कही जा रही है। लोगों पर और अधिक टैक्स बढ़ा दिए जाएं और वह बढ़ा हुआ टैक्स अल्पसंख्यकों को, सरकारी कर्मचारियों को राजनेताओं में बांट दिया जाए। राहुल गांधी लगातार यह बात कह रहे हैं कि हम नौकरी देंगे, सरकारी कर्मचारियों की संख्या बढ़ाएंगे। इन सरकारी नौकरों को अधिक से अधिक सुविधा देंगे, बहुसंख्यको पर नियंत्रण किया जाएगा, अल्पसंख्यकों को प्रोत्साहित किया जाएगा। आज तक राहुल गांधी ने कभी यह नहीं कहा कि सरकारी विभाग कम किए जाएंगे। सरकार और जनता के बीच सत्ता का जो समीकरण है वह समीकरण बदल जाएगा। यह बात बोलते हुए राहुल गांधी को कष्ट होता है। अपने नाम के आगे गांधी शब्द जोड़ते हुए हमारे नेताओं को शर्म नहीं आती जब वह राजनीतिक सत्ता को ज्यादा से ज्यादा मजबूत बनाने का प्रयास करते रहते हैं। मैं इस बात का पूरी तरह पक्षधर हूँ कि सारे अधिकार परिवारों को दे दिए जाएं, गांव को दे दिए जाएं, सरकारों का हस्तक्षेप कम से कम हो। बाजार पूरी तरह स्वतंत्र हो अर्थव्यवस्था पर सरकार का किसी प्रकार का कोई अंकुश ना हो। वर्तमान चुनाव इस बात का अवसर देते हैं कि हम राजनीतिक सत्ता के विकेंद्रीकरण विरोधियों को किसी भी प्रकार से शक्तिशाली न होने दें। नए-नए टैक्स बढ़ाए जाएंगे, अल्पसंख्यकों को विशेष सुविधा दी जाएगी, आरक्षण बढ़ाया जाएगा सरकारी कर्मचारियों को और अधिक राहत दी जाएगी। इस प्रकार की कपटपूर्ण बात करने वालों का सामाजिक बहिष्कार कीजिए।

ईवीएम पर सुप्रीमकोर्ट का निर्णय स्वागतयोग्य:

मैंने अपने जीवन के 70 से अधिक वर्षों में अनेक चुनाव में भाग लिया और चुनाव का संचालन भी किया। मैंने स्वयं देखा कि पुराने जमाने में जो चुनाव होते थे उन चुनावों में बूथ कब्जा होता था। जो ताकतवर होता था वह बलपूर्वक मतदान करवा देता था। धीरे-धीरे चुनाव प्रणाली में बदलाव होने लगा धांधली कुछ कम होनी शुरू हुई, बाद में चुनाव ईवीएम से होने लगा और यह लूटमार पूरी तरह बंद हो गई। जब से चुनाव प्रणाली में सुधार शुरू हुए, तब से ही धीरे-धीरे कांग्रेस पार्टी कमजोर होती चली गई और भारतीय जनता पार्टी आगे बढ़ने लगी क्योंकि लूटमार और धांधली का हस्तक्षेप चुनाव में घटने लगा। पिछले कुछ वर्षों से कांग्रेस पार्टी तथा विपक्ष के अनेक नेताओं ने यह महसूस किया कि जब तक चुनाव में धांधली नहीं की जाएगी, तब तक नरेंद्र मोदी से वैचारिक धरातल पर चुनाव जीतना असंभव है। इसलिए राहुल गांधी के नेतृत्व में सभी विपक्षी दलों ने सारी ताकत लगाई कि चुनाव पुरानी पद्धति से ही होना चाहिए, ईवीएम से नहीं। इसके लिए सबने जनता के बीच में भी वातावरण बनाया और संसद सहित अनेक स्थानों पर लगातार मांग की कि चुनाव पुरानी पद्धति से हों लेकिन कहीं भी इन्हें सफलता नहीं मिली। अंत में प्रशांत भूषण के मार्गदर्शन में हमारे नेताओं ने सुप्रीम कोर्ट का दरवाजा खटखटाया। आज सुप्रीम कोर्ट का भी निर्णय आ गया। अपने निर्णय में सुप्रीम कोर्ट ने भी विपक्षी दलों के गाल पर करारा तमाचा मारा है। राहुल गांधी की तो आज बोलती बंद हो गई है। मुझे आश्चर्य है कि कोई भी राजनीतिक दल इतनी बेशर्मी से पुराने लूटमार वाली चुनाव पद्धति के पक्ष में खुलकर बोलेगा लेकिन यह बेशर्म नेता ईवीएम के खिलाफ लगातार अभियान चलाते रहे। सुप्रीम कोर्ट ने यह सारी याचिकाएं रद्द कर दी यहां तक कि प्रशांत भूषण जी की यह कोशिश भी असफल हुई कि चुनाव तक इस निर्णय को आगे बढ़ा दिया जाए सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के बाद हमारे विपक्षी दलों के नेताओं को यह अनुभव हो जाना चाहिए कि भारत की जनता समझदार हो गई है। उसे तर्क से समझाया जा सकता है, वैचारिक धरातल पर ही बताया जा सकता है। झूठे वादों से भारत की जनता को बरगलाना कठिन होता जा रहा है।

इस फैसले में सुप्रीम कोर्ट ने इस प्रकार की मांग करने वालों की नियत पर भी प्रश्न उठाया है। सुप्रीम कोर्ट में अपने फैसले में कहा है कि देश की प्रगति के विरुद्ध दुनिया

में प्रचार करने वाले बुरी नियत से इस तरह की मांग उठा रहे हैं यह एक गंभीर टिप्पणी है। इस टिप्पणी के बाद कांग्रेस पार्टी ने तो अपना मुंह बंद कर लिया लेकिन कम्युनिस्टों ने इस टिप्पणी का बहुत बुरा माना है। कम्युनिस्टों की तरफ से कई प्रवक्ताओं ने सुप्रीम कोर्ट पर प्रश्न लगाए हैं। उन्होंने कहा है कि अब यह बात साफ दिख रही है कि नरेंद्र मोदी बहुमत से आगे चले जाएंगे क्योंकि सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणी के बाद नरेंद्र मोदी का मनोबल बहुत बढ़ गया है। बात भी सच है कि सुप्रीम कोर्ट की यह टिप्पणी बहुत गंभीर है। जिस तरह इस टिप्पणी से कम्युनिस्ट दलालों को धक्का लगा है यह बहुत अच्छा है। सच्चाई यह है कि सुप्रीम कोर्ट को पहले से ही इस प्रकार की टिप्पणियां करनी चाहिए थी। कम्युनिस्ट किसी भी व्यवस्था पर विश्वास नहीं करते। कम्युनिस्ट किसी पर भी, किसी भी समय, किसी भी प्रकार का आरोप लगा सकते हैं। मुझे यह जानकर दुरूख होता है कि हमारे देश के होनहार नौजवान राहुल गांधी और अरविंद केजरीवाल कम्युनिस्टों के चंगुल में फंस गये हैं।

आवागमन महंगा होने से महंगाई नहीं बढ़ेगी:

आज हम राजनीति से हटकर अर्थ नीति पर एक चर्चा की शुरुआत कर रहे हैं। सारी दुनिया में आमतौर पर यह माना जाता है कि यदि आवागमन महंगा होगा तो वस्तुओं के दाम बढ़ जाएंगे। इसी आधार पर डीजल, पेट्रोल, बिजली के महंगा होने का भी विरोध किया जाता है। मैने इस मामले पर देश भर के कई अलग-अलग क्षेत्रों में रिसर्च किया। मैंने यह पाया कि यह धारणा बिल्कुल गलत है। सच बात तो यह है कि आवागमन महंगा होने से महंगाई पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। जब भी आवागमन महंगा होता है तो बाहर से आयात की जाने वाली वस्तुओं का मूल्य बढ़ जाता है और बाहर निर्यात करने वाली वस्तुओं का मूल्य कम हो जाता है। इसका अर्थ हुआ कि ग्रामीण क्षेत्रों में बाहर जाने वाली वस्तुएं सस्ती हो जाती है, बाहर से आने वाली महंगी हो जाती है। कुल मिलाकर पूरे भारत का यदि सर्वे किया जाए तो आवागमन महंगा होने से शहरों का जीवन कुछ महंगा हो जाता है, गांव का जीवन कुछ सस्ता हो जाता है। शहरों के बड़े उद्योगों पर कुछ बुरा प्रभाव पड़ता है, गांव के छोटे उद्योगों पर कुछ अच्छा प्रभाव पड़ता है। कुल मिलाकर आवागमन महंगा होने का वस्तुओं के मूल्य वृद्धि पर या सामान्य जन जीवन पर कोई

व्यापक प्रभाव नहीं होता। मैने इस विषय पर कई बार घूम करके रिसर्च किया और तब मुझे यह बात पता चली कि दुनिया भर में संपन्न लोगों ने मिलकर शहरी जनजीवन से प्रभावित लोगों के साथ जुड़कर यह गलत निष्कर्ष प्रचारित किया है कि आवागमन का महंगाई पर कोई प्रभाव पड़ता है। मैं इस विषय पर खुली चर्चा का पक्षधर हूँ।

आईये महंगाई को समझते हैं:

"महंगाई बढ़ी है या घटी है" इस विषय पर चर्चा करने के पहले हमें इस बात को समझना पड़ेगा कि महंगाई है क्या? यदि रुपए का मूल्य बदलता है अर्थात वस्तुओं की कीमत 50 गुना बढ़ती है और आपकी क्रय शक्ति साठ गुना बढ़ती है तो आप इसे महंगाई कहेंगे या महंगाई का कम होना कहेंगे? यदि आम लोगों का जीवन स्तर सुधरता है तो आप महंगाई का घटना कहेंगे या महंगाई का बढ़ना कहेंगे? स्वतंत्रता के बाद 75 वर्षों में आम लोगों का जीवन स्तर करीब ढाई गुना सुधर गया है, संपन्न लोगों का साठ गुना मध्यम वर्ग का 10 गुना और निम्न वर्ग का ढाई गुना सुधरा है। यह प्रश्न भी विचारणीय है कि यदि सोना चांदी और जमीनों के दाम बढ़ रहे हैं तो क्या महंगाई बढ़ रही है या महंगाई के कम होने के कारण सोना चांदी और जमीनों के दाम बढ़ रहे हैं? इन तीनों प्रश्नों के जब तक हम उत्तर नहीं खोज लेते तब तक हम महंगाई पर कोई निष्कर्ष नहीं निकाल सकेंगे। यदि आप कहते हैं कि महंगाई बढ़ी है तो आप बताइए कि पिछले 75 वर्षों में महंगाई कितने गुना बढ़ गई और कितना जीवन स्तर नीचे चला गया? इस प्रश्न का उत्तर दिए बिना महंगाई का आकलन नहीं किया जा सकता है। मैंने जो इस संबंध में रिसर्च किया है इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूँ कि सारी दुनिया में जितनी प्रति व्यक्ति इनकम बढ़ रही है उससे बहुत कम वस्तुओं के मूल्य बढ़ रहे हैं और इस तरह कुल मिलाकर महंगाई घट रही है। भारत में भी करीब-करीब यही स्थिति है फिर भी अनेक स्वार्थी तत्व लगातार महंगाई बढ़ने का रोना रोते रहते हैं। जब कांग्रेस पार्टी की सरकार थी तो पेशेवर भाजपा के लोग इसी महंगाई का रोना रोते थे और अब यह भाजपा की सरकार आई है तो वहीं कांग्रेसी पेशेवर इस महंगाई का रोना रो रहे हैं। यह महंगाई का हल्ला करना तो राजनेताओं का और सरकारी कर्मचारियों का व्यापार है और इस व्यापार में हम सब लोग भ्रम में प्रभावित हो जाते हैं। इसलिए आज अवसर आया है कि हम महंगाई के नाम पर दुकानदारी

करने वाले राजनेताओं को बेनकाब करें। सच बात यह है कि पिछले 70 वर्षों में भारत में लगातार महंगाई कम होते जा रही है और पेशेवर लोग झूठ बोलकर महंगाई शब्द की दुकानदारी कर रहे हैं।

हम इस बात पर गंभीरता से विचार करेंगे कि महंगाई के प्रभाव का आंकलन किस प्रकार किया जा सकता है। मेरे विचार से यदि सोना-चांदी और जमीन या शेयर बाजार, मुद्रा स्थिति की तुलना में अधिक तेजी से बढ़ता है तो इसका स्पष्ट अर्थ है कि महंगाई घट रही है क्योंकि आवश्यक वस्तुएं सस्ती होगी तब लोगों के पास कुछ बचत होगी और उस बचत के बदले में सोना-चांदी और जमीन या शेयर मार्केट के मूल्य बढ़ेंगे।

यदि सुविधा की वस्तुओं का प्रयोग आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं की तुलना में अधिक बढ़ता है तो इसका अर्थ है की महंगाई घट रही है क्योंकि जब महंगाई घटेगी, तभी लोग सुविधा की वस्तुएं खरीदने की तरफ आकर्षित होंगे। वर्तमान में भी सुविधा की वस्तुओं की मांग बढ़ रही है। वर्तमान समय में शराब आवागमन कृत्रिम उर्जा की मांग लगातार बढ़ रही है। लेकिन यदि सोना-चांदी, जमीन और शेयर मार्केट के मूल्य घट रहे हैं इसका अर्थ है कि महंगाई बढ़ रही है क्योंकि लोगों की क्रय शक्ति घट रही है और उपभोक्ता वस्तुओं का मूल्य बढ़ रहा है लोगों के पास बचत नहीं हो रही है। स्पष्ट है कि जिस समय महंगाई का प्रभाव पड़ता है उस समय आम लोग सोना-चांदी और जमीन बेचकर पेट भरने की जुगाड़ में लग जाते हैं इस तरह हम समझ सकते हैं कि स्वतंत्रता के बाद लगातार महंगाई घट रही है। महंगाई का झूठा हल्ला राजनेता, पूंजीपति और सरकारी कर्मचारी अपने स्वार्थ के कारण करते हैं जबकि महंगाई लगातार घट रही है। आप प्रत्यक्ष देख सकते हैं कि महंगाई का हल्ला करने वाला इन तीनों में से ही किसी वर्ग का व्यक्ति होगा।

बेरोजगारी की क्या हो परिभाषा:

मेरे कई साथियों ने यह सुझाव दिया कि हमें बेरोजगारी विषय पर भी व्यापक चर्चा करनी चाहिए। बेरोजगारी की परिभाषा सारी दुनिया में आप गूगल पर या किसी अन्य किताब में खोज लीजिए। आपको जो भी परिभाषा मिलेगी, वह पूरी तरह गलत है। बेरोजगारी की दुनिया में नई परिभाषा बनाने की जरूरत है।

अब तक रोजगार के आधार पर दो वर्ग बने हुए हैं एक है रोजगार प्राप्त और दूसरा है बेरोजगार। अब एक तीसरा वर्ग बनाए जाने की जरूरत है। उसमें एक है रोजगार प्राप्त, दूसरा है 'उचित रोजगार की प्रतीक्षा में सक्रिय' और तीसरा है बेरोजगार। इसका अर्थ यह हुआ कि बेरोजगार वही व्यक्ति माना जाएगा जिसे किसी स्थापित व्यवस्था द्वारा घोषित न्यूनतम श्रम मूल्य पर भी रोजगार उपलब्ध ना हो। इसका अर्थ यह हुआ कि जो व्यक्ति अपने योग्यतानुसार रोजगार की प्रतीक्षा में बेरोजगार है वह बेरोजगार नहीं माना जा सकता। क्या ऐसे प्रतीक्षारत को रोजगार देना समाज की या राज्य की जिम्मेदारी हो सकती है ... मेरे हिसाब से नहीं। कल्पना कीजिए कि एक व्यक्ति वर्तमान परिस्थितियों में भूखा होने के कारण रू. 200 में काम करने को मजबूर है और एक दूसरा व्यक्ति पढ़ा-लिखा होने के कारण हजार रुपए में भी काम करने को तैयार नहीं है। क्या रू.200 में काम कर रहे व्यक्ति को रोजगार प्राप्त और हजार रुपए में काम न करने वाले को बेरोजगार माना जा सकता है। सच बात यह है कि ऐसी गलत और भ्रामक परिभाषा बुद्धिजीवियों ने षड्यंत्रपूर्वक दुनिया में बना रखी है, इस परिभाषा को बदले जाने की जरूरत है। व्यक्ति की आवश्यकतायेँ तीन प्रकार की हैं १. मौलिक आवश्यकता २. सुविधा संबंधी आवश्यकता और ३. संपन्नता संबंधी आवश्यकता। हम व्यक्ति की मौलिक या प्राकृतिक आवश्यकताओं की तो पूर्ति को अपनी जिम्मेदारी मान सकते हैं, लेकिन उसकी इच्छाओं की पूर्ति को हम रोजगार के साथ नहीं जोड़ सकते। वह पूरी करना हमारी जिम्मेदारी भी नहीं है। दुर्भाग्य से धूर्त्त लोगों ने बेरोजगारी की गलत परिभाषा बना दी है जिसके कारण बेरोजगारों की वास्तविक संख्या छुप जाती है और प्रतीक्षारत लोगों को बेरोजगार मान लिया जाता है। इस विषय पर कल भी चर्चा जारी रहेगी। (क्रमशः)

सोशल मिडिया से

ज्ञान भिक्षुक

पूरी दुनिया में साम्यवाद खुद को Unproductive अनुत्पादक साबित कर चुका है। वे गठरी ढोने वाले लोगों में बड़ी गठरी और छोटी गठरी के बीच असंतोष का बीज बो कर खुद को कमजोर का साथी दिखाता है। फिर मजबूत के अर्जित सम्पत्ति को कमजोरों के बीच बाँटने के नाम पर ही अपनी जीविका चलाता है। यह खुद वे यानी कम्यूनिस्ट भी अच्छी तरह जानते हैं। बांझ होने के अपने कारण हैं और परिणाम भी ... मसलन हार्मोनल अथवा फिजिकल इंबैलेंसिंग इसे आप जेनेटिकली भी कह सकते हैं, दूसरा कारण है जवानी की गलतियां। अधिकांशतः बांझ होने का पता ही तभी चलता है जब आपसे लोग उम्मीद लगाए बैठे हों और हर आशा अपेक्षा पर आपके पास उन्हें देने के लिए कुछ ना हो। बांझ होना नीयती का खेल भी माना जा सकता है, मगर महत्वाकांक्षा शान्ति से बैठने दे तब ना। इन परिस्थितियों में निर्लज्जता और अधिक आक्रामक हो उत्पादकता को ही शत्रु घोषित कर देती है। अम्बानी अडानी के विरुद्ध लगते नारे और प्राकृतिक संसाधनों की बंदरबांट की आवाज के पीछे की सच्चाई यही है।

.... सोचें एक अनुत्पादक अपने अन्दर सत्ता के शीर्ष पर पहुंचने की महात्वाकांक्षा पाल ले तो क्या होगा?...

फिर वह आपकी सब उपलब्धियों (संतान सम्पत्ति आदि) पर सबका अधिकार घोषित कर देगा। संभव है कि अभावग्रस्त लोग उसकी इन बातों में अपना सुखद भविष्य देखें ... लेकिन उन्हें भी यहां यह समझना बेहद जरूरी है कि उसका (अनुत्पादक का) लक्ष्य तो उन्हें (गरीब) भी कुछ देना नहीं है।

.... दरअसल वह खुद की unproductive अनुत्पादकता को येन-केन-प्रकारेण एक दुर्लभतम गुणवत्ता साबित करना चाहता है।

कांग्रेस के राहुल गांधी इसी वैश्विक संक्रामक बिमारी वामपंथ से बुरी तरह ग्रस्त हैं। वह कम्युनिज्म के खोखलेपन को (inheritancetax) से ढंकने की कोशिश कर रहे हैं। कांग्रेस का (inheritancetax)planning के शिगूफे के पीछे सच्चाई यही है।

त्रिभुवन सिंह

किसी भी समाज के वैभवशाली होने के लिए चार शक्तियों का होना आवश्यक है।

प्रज्ञा शक्ति या मेधा शक्ति: इसके बिना कोई भी नया अन्वेषण संभव नहीं है। दूसरे विश्वयुद्ध के बाद अमेरिका ने मेधा शक्ति को अपने यहां आमंत्रित करने और उनको नागरिकता प्रदान करने का निर्णय लिया। विश्व के समस्त देशों की प्रत्येक तरह की मेधाओं को उन्होंने अपने यहां शरण दिया।

समाज कितना भी वैभवशाली हो, यदि उस समाज की रक्षा शक्ति कमजोर हो गई, तो कोई भी अन्वेषण, कोई भी वाणिज्य, कोई भी श्रम शक्ति बच नहीं सकती। यही भारत के साथ हुवा।

तो दूसरी शक्ति है रक्षा शक्ति।

आप कितना भी निर्माण कर लें, कितना भी अन्वेषण कर लें, परंतु यदि उसे विश्व में बेंच नहीं सकते तो न वैभव कमा सकते हैं और न ही नाम कमा सकते हैं। इसे कहते हैं वाणिज्यिक शक्ति। डिजिटल मीडिया इस बात का प्रमाण है।

चौथी शक्ति हैरू नए नए अन्वेषणों को धरातल पर उतारने वाला, घर घर जाकर उनको पहुंचाने वाली शक्ति: श्रम शक्ति, जिसे हम सर्विस सेक्टर, इंजीनियरिंग सेक्टर, स्टार्ट अप सेक्टर आदि कहते हैं। स्टार्ट अप में मेधा और श्रम शक्ति दोनों का होना आवश्यक है।

भारत ने इसी को वर्ण धर्म आश्रम का नाम दिया। व्यवस्था शब्द इसाई विद्वानों द्वारा रचा गया है। वर्ण व्यवस्था शब्द किसी ग्रंथ में मुझे आज तक मिला नहीं। व्यवस्था अर्थात मनुष्य द्वारा निर्मित कोई व्यवस्था। प्रति अपने आप में बहुत बड़ी व्यवस्था है परंतु उसे व्यवस्था नहीं कहा जाता। इसी तरह वर्ण धर्माश्रम एक प्राकृतिक व्यवस्था थी।

अब हमारे पास दो विकल्प हैं:

1. जय बीम जय शरिया, बोलकर उन्हें गौरवान्वित किया जाय, जिन्हें आज दलित, पिछड़ा, अछूत आदि बोला जा रहा है। परंतु इसमें गौरव बोध नहीं होता, बल्कि अपमान और हीनता बोध होता है। यह नकारात्मक तरीका है।

2. एक दूसरा विकल्प भी है।

भारत की प्रज्ञा विभाजन का मौलिक रूप से बंटवारा करके उनका गौरव भी स्थापित किया जाय, जिन्हें राजनीतिज्ञ अपनी रोटी सेंकने के लिए पिछड़ा, अछूत, दलित आदि कहते आ रहे हैं।

प्रज्ञा विभाजन:

ब्राम्हण: मेधा शक्ति

क्षत्रिय: रक्षा और शासकीय शक्ति
वैश्य: वाणिज्यिक शक्ति
शूद्र: सर्विस सेक्टर, श्रम शक्ति, शिल्प शक्ति, फिल्मी दुनिया, समाचार की दुनिया, गायन वादन और मनोरंजन की दुनिया आदि आदि।
कौटिल्य प्रमाण हैं इसके।

राजीव मिश्र
एक नेता अधिक शक्तिशाली हो जायेगा, एक पार्टी को बहुत अधिक सीटें आ जायेंगी तो लोकतंत्र कमजोर पड़ जायेगा... लोकतंत्र के लिए सशक्त विपक्ष जरूरी है...
कितना जरूरी है? एक व्यक्ति के अधिक शक्तिशाली होने से लोकतंत्र कितना कमजोर पड़ जायेगा?
एक लोकतांत्रिक देश है सिंगापुर. 1964 में जब से सिंगापुर मलेशिया से अलग हुआ तब से वहां एक ही पार्टी की सरकार है... PAP यानि पीपल्स एक्शन पार्टी की. पहले 25 वर्ष जबतक ली कुआन यू प्रधानमंत्री रहे, विपक्ष को एक भी सीट नहीं आई, आज कल दो-चार सीट आ जाती है लेकिन उनके जीते जी विपक्ष चौखट के बाहर ही खड़ा रहा।
क्या इसलिए कि वहां लोकतंत्र कमजोर था?
नहीं! इसलिए कि सिंगापुर में कहीं भी एक साथ इतने सारे मूर्ख लोग नहीं रहते थे कि सब मिलकर ली कुआन यू जैसे नेता के रहते किसी और को वोट दे दें. ऐसा नहीं है कि सिंगापुर में बेवकूफ नहीं थे। ली को अक्सर सिर्फ 70-75% ही वोट आते थे. सिंगापुर को मछुआरों के गांव से उठाकर एक आर्थिक विश्वशक्ति बना दिया, फिर भी 25-30% तो ऐसे थे जो ली के विरोधी थे. 15-20% तो मलाय शांतिदूत थे. बाकी ऐसे चीनियों की भी अच्छी खासी संख्या थी जिन्होंने मार्क्स बाबा की लाल घुट्टी पी रखी थी।
पर क्या था कि बाकी के 70-75% को कोई शक नहीं था कि उनकी जिंदगी को किसने बेहतर बनाया है। तब वहां सरकार से सवाल पूछने का काम भी सत्ता पक्ष के सांसद कर लेते थे। लोकतंत्र ठीक ठाक चल जाता था बिना विपक्ष के भी। भ्रष्टाचार के आरोप उठते थे तो उनका जवाब देना पड़ता था। अक्सर ऐसे आरोप झूठे होते थे तो उन्हें उठाने वाले को कोर्ट में घसीट कर बर्बाद कर दिया जाता था। एक बार खुद ली कुआन पर एक फ्लैट सस्ते में खरीदने का आरोप लगा तो ली ने ना सिर्फ उसका जवाब दिया, अपने को निर्दोष

सिद्ध किया, बल्कि वह फ्लैट बेच कर पैसे चौरिटी में दे दिए। अच्छा भला फलता-फूलता लोकतंत्र था।

अगर सशक्त विपक्ष और अस्थिर सत्तापक्ष ही अच्छा लोकतंत्र कहलाता तो जिन देशों में पांच साल में तीन बार चुनाव होते हैं वे सबसे सफल लोकतंत्र कहलाते, हमने भी ऐसा लोकतंत्र देखा है। यह झूठ है कि लोकतंत्र के लिए विपक्ष का होना जरूरी है। चुनाव होने चाहिए, जनता के पास विपक्ष को चुनने का ऑप्शन होना चाहिए, लेकिन विपक्ष इस लायक ना हो कि जनता उसे चुने तो नहीं चुना जाना चाहिए, विपक्ष में नक्सली, माओवादी बैठे हों तो वह विपक्ष संसद के बाहर ही रहे. जो आपकी जीवन भर की अर्जित संपत्ति लूटने के सपने देखते हैं उन्हें संसद तो क्या, देश में रहने का अधिकार नहीं होना चाहिए। विपक्ष पहले अपना चरित्र सुधारे, फिर चुने जाने के सपने देखे। तब तक हमें मोदी को 400 क्या, 500 देना होगा तो देंगे।

क्रमशः ३

जीवन पथ

पूर्व के भाग में नरेन्द्र जी के उपन्यास "जीवन पथ" में हमने पढ़ा कि आतंकवाद से दुष्प्रभावित अफगानिस्तान से विस्थापित हो दिल्ली में अपनी गुजर-बशर कर रहे 'मसूद खां' वहां के बिगड़ते हालत से चिंतित हैं और अपनी बेटी 'सिमी' से चर्चा करते हैं। अब आगे...

"ये आप से बेहतर कौन समझ सकता है पापा," सिमी बड़े सहज भाव से कहती है- आपके पास तो जिन्दगी के बहुत से तजुरबे हैं। वैसे भी वहाँ के बारे में मैं क्या कहूँ? क्योंकि हमें तो आपने इस अजीम मुल्क मे जीवन दिया है। माना कि यहाँ कुछ कमियाँ हैं लेकिन वे नायाब खूबियाँ भी हैं, दुनिया में और कहीं जिनकी कल्पना भी नहीं हो पाती होगी। यहाँ जैसा सरल जीवन दर्शन कहीं और नहीं हो सकता है। वास्तव में भारतीय दर्शन तो भावनाओं और विचारों का ऐसा अदभुत समन्वय है जिसकी मैं तो कोई तुलना ही नहीं कर पाती हूँ।

सिमी की बात सुनकर 'खां' उसके सर को दुलारते हुए कहते हैं- जितनी अजीज तुझे अपनी सरजमीन है क्या वह हक मुझे अपनी से लगाव का नहीं है?

आप काबुल मे पैदा हुए थे, इसलिए आपको वहाँ की याद आज भी सताती है। मैं दिल्ली में पैदा हुई हूँ, लिहाजा मुझे यहाँ के रिवाज पसन्द है। यह तो कुदरत की अजीम कारगुजारी

है। क्योंकि उसने तो तमाम जमीन को आबाद किया है, पर लोगों ने इसे भला मुल्कों की सरहदों में तकसीम क्यों कर दिया?क्या काबुल और दिल्ली के लोग अलग-अलग ढंग से साँस लेते हैं। ... सिमी का मासूम सा सवाल खां के वजूद को झंझोडकर रख देता है। जिसे सुनकर वह बुद-बुदा पड़ते हैं- दुनिया को तो सत्ता के हबशियों ने सियासत के उस मोहरे से बांट दिया है जिसे इसके निजाम का जिम्मेदार बनना था। पता नहीं लोग इस बात को कब समझेंगें कि कोई भी निजाम लोगों को इंसाफ और हिफाजत देने के लिए होता है न कि उन्हें हदों में बांधने के लिए! लोग निजाम को हुकूमत का दर्जा देकर इसे बेईज्जत करते हैं। ये तो बस जालिमों की कारगुजारी है। लोग इस फर्क को कब समझेंगें, ये मलाल दिल मे रहता है और खां अपने उत्तर में बहुत से जीवित सवाल छोड़कर चुप हो जाते हैं। जिसे सुनकर सिमी स्वयं से कहती है - दुनिया में हुकूमत के आलमबरदारों ने जहर से सने फाहों से लोगों के आँसू पोंछे हैं और इस जहर से हुए दर्द से जब लोग कराहे हैं तो उन्हें जीने के नाकाबिल करार दिया है। मूल बात तो यह है कि निजाम और हुकूमत के बीच का फर्क तो हमें पहचानना ही होगा और फिर आवाम की इच्छाओं के निजाम को अम्ल में लाना होगा। वरना जिन्दगी को कभी गुलामी से मुक्ति नहीं मिल सकेगी!...... खैर! सिमी अपनी बात के नजरिए को बदलकर कहती है-लोग जब तक इस बात को आचरणगत रूप से स्वीकार नहीं कर लेगें तब तक ये बहस तो खत्म नहीं होने वाली। लेकिन अब आप अपने इस तनाव से मुक्त हो जाईए पापा। ये मेरी आपसे इल्तजा है।...... खां उसकी बात स्वीकार करते हैं तो वह आगे कहती है-पापा! आज मैं आपसे यह जानना चाहती हूँ कि जब आप भारत आए थे तो आपको यह देश कैसा लगा था?क्या तब आपके साथ यहाँ के लोगों ने ऐसा ही व्यवहार किया था जैसा कि अक्सर विस्थापित लोगों के साथ होता है? तब आपके सामने समस्याएं तो बहुत आयी होगें, उन्हें आपने कैसे झेला होगा?..........सिमी बात बदलते हुए कहती है।

खां प्रत्युत्तर देते हैं- देश कौन सा खुद में अच्छा या बुरा होता है बेटी! जमीन की सीने पर कब अच्छाई और बुराई की फसल पैदा होती है। अच्छाई और बुराई की पैदाइश तो लोगों द्वारा उनकी इच्छाओं पर होने वाले अम्ल का नतीजा होती है। न तो मैं बुरे देश को छोड़कर आया था और न बुरे देश में आकर बसा था। हाँ हर तरह के लोग हर जगह मिल जाते हैं।....... जब हम यहाँ आए थे तो किसी ने शरणार्थी कहकर हम पर दया की थी,

किसी ने ताना कसा था और कुछ ऐसे भी मिले जिन्होने आगे बढ़कर हमारे दुखों को बाँट लिया। खुदा की सबसे खूब इनायत 'इंसानियत' के ऐसे कद्रदान कितने अजीम होते हैं!
खां एक दार्शनिक की तरह अपनी बात कहकर चुप हो जाते हैं तो सिमी उन्हें पुनः टोकती है- लेकिन उस दौर में आपके सामने मुसीबतें तो बहुत आयी होगें! आप अपने गुजरे हुए वक्त के बारे में किसी से कोई जिक्र नहीं करते हैं। हाँ उस दौर की घुटन में आप जब भी खोए हुए होते हैं तो मुझे बहुत दर्द महसूस होता है!..... अलबत्ता उस दौर में भारत में आपको ऐसा क्या मिल गया था जो आप यहीं के होकर रह गए?
तूने उन गुजरी हुई मुसीबतों के बारें में जानने से अपनी बात शुरू की है और भारत में बस जाने पर खत्म। ... एक लम्बी साँस खींचकर, खां पुनः बोलते हैं ... उस दौर में मेरे सामने सबसे बड़ी मुसीबत तो तू थी जो अपनी माँ के गर्भ में पल रही थी। इतने वर्ष बीत जाने के बाद भी जब कभी मुझे मुसीबत भरे वे दिन याद आते हैं तो मेरी रूह कांप उठती है। तेरी पैदाइश के दिन का वह मंजर कितना खौफनाक था? मैं अपने बारे में तो सोचता भी कैसे, तारिक और रियाज के लिए भी भरपेट खांने का बंदोबस्त नहीं कर सका था और तब यहाँ हमारा कोई मद्दगार भी नहीं था। तेरी वालिदा की तबियत नाशाद चल रही थी। ऐसे हालात में मैं तुम लोगों को छोड़कर कई रोज से मजदूरी पर भी नहीं जा सका था। उस रोज शाम ढलने को थी, खुले मैदान के एक कोने मे बनी जरा सी सिरकी, और उसमें भूख और बेबसी के दर्द से बिलखता हुआ मेरा परिवार! अपनी बेबसी का मेरे पास केवल यह जवाब था कि एक शरणार्थी को भला इससे मुकम्मल सजा और क्या मिल सकती है?हकीकत में वह वक्त मुझसे भुलाए नहीं भूलता। तब मैने खुद से पूछा कि यहाँ आकर भूख से मरना बेहतर रहेगा या उस युद्ध की विभीषिका में खुद को झोंक देना बेहतर रहता जिसके लड़ने वाले उसे इंसानियत की हिफाजत का जरिया बता रहे थे। उस दिन मैंने एहसास किया कि मैंने जिन्दगी में जिस सुकून की चाह में मादरेवतन छोड़ा था वह भूख मिटाने की ख्वाइश में खत्म हो जाएगी। खुदा की बनाई इस दुनिया में न जाने किस दिन शान्ति स्थापित होगी?क्योंकि लोग इंसानियत की हिफाजत सभ्यता की कसौटी पर नहीं हथियारों से करना चाहते हैं। इसका क्या कारण है? सिर्फ यह कि लोगों को अपना हक न मिलने का तो मलाल होता है लेकिन अपनी जिम्मेदारियां निभाने के मामले में वे समाज के साथ जाहिलों जैसा सुलूक करते हैं। मैं इस बात का कायल होकर ही वह युद्ध छोड़कर

यहाँ आया था। सच में ऐसे युद्धों में मरने वालों की मौत गाजियों के लिए नहीं होती है।..... अलबत्ता यहाँ आकर भी मुझे अपने इस फलसफे की तौहीन होती हुई नजर आयी। मैंने तुम लोगों को देख-देखकर वे जिल्लत भरे दिन काटे हैं, वरना खुदकुशी आदमी का अगर कहीं जायज हक होता है तो वह ऐसे ही हालात के लिए होता है। ... क्षणभर चुप रहकर वह पुनः बोलते हैं- पर ऐसा भी नहीं होता है बेटी कि खुदा अपने बन्दो को यूँ ही भुला देता है। उसने मेरे उस रंज को महसूस किया कि मेरा जो हुआ सो हुआ लेकिन इन बच्चों का क्या होगा?उस दौर में दर्द भरे वे लम्हे मेरी सहनशक्ति का इम्तिहान ले रहे थे। तब मुझे पता भी नहीं चला कि उन दर्द भरे लम्हों के बीच खुदा का भेजा हुआ एक फरिश्ता कब मेरे सामने आकर खड़ा हो गया और कहने लगा- उठो खां! तुम्हारा ये जिल्लत भरा वक्त बीत चुका है, अब तुम्हें समाज के बीच फिर से अपना मुकाम बनाना है। ... खां, सिमी की तरफ देखते हुए कहते हैं-क्या तू यह नहीं जानना चाहेगी कि उस रोज कौन हमारी मदद करने के लिए आया था?

जी! वह उत्सुकतावश पूछती है।

तेरे श्रीवास्तव अंकल! ... वह अपनी बात आगे बढ़ाते हुए कहते हैं- मुझे आज भी याद है, उस नेक इंसान ने हमारी सिरकी के नीचे से मुहाने से झांकते हुए कहा था- ‘‘मेरी बातों को अन्यथा मत लेना दोस्त और न यह मानना कि मैं जो तुम्हारी मदद करना चाहता हूँ वह दया की भीख है। मैंने वास्तव में जीवन में कभी किसी को भीख नहीं दी है। ... ... हाँ मैंने तुम्हारे बारे में पता किया है कि तुम समस्या ग्रस्त हो। मैं पेशे से स्कूल टीचर हूँ और तुम्हारे सामने आयी इन मुश्किल परिस्थितियों में मैं तुम्हारी मद्द केवल इसलिए करना चाहता हूँ ताकि तुम मेरे देश पर और इसमें रहने वाले समाज पर उतना ही विश्वास करते रहो जितने की उम्मीद लेकर अपने देश से यहाँ तक आए हो।‘‘ ... ... क्षण भर चुप रहकर खॉन पुनः बोलते हैं- मैं एकदम से उस मर्मस्पर्शी इंसान की भावनाओं को न समझ सका और मैंने उससे पूछा- क्या आप हमारी ऐसी किसी सरकारी योजना के मार्फत मदद करा सकते हैं जो विभिन्न देशों की सरकारें हमारे जैसे मुसीबत के मारे शरणार्थियों के लिए चलाती हैं?

‘‘मैं सरकार का प्रतिनिधि बनकर आप लोगों के पास नहीं आया हूँ दोस्त! सरकार से पहले समाज है और आप मेरे लिए शरणार्थी नहीं इंसान हैं। मैं किसी भी औपचारिकता पर ध्यान न देते हुए आपके परिवार की मद्द केवल इसलिए करना चाहता हूँ ताकि समाज

की मर्यादा बनी रहे। हालांकि मैं राष्ट्रीय स्वाभिमान का भी प्रबल पक्षधर हूँ लेकिन सामाजिक जिम्मेदारियों की पूर्ति के लिए क्या व्यक्ति को केवल राज्य के तत्वावधान में ही कार्य करना चाहिए? ... मैं, परिस्थिति की भंगिमा को समझते हुए इस समय यह कहना चाहता हूँ कि समाज तथा राज्य की संयुक्त तथा स्वतन्त्र जिम्मेदारियों की समीक्षा बाद में कर लेंगे, पहले वह कर लेते हैं जिसे इंसानियत की गरिमा हमसे कह रही है।"

उसकी तमाम बातें सुनकर मैंने एकबारगी तुम सब लोगों की तरफ देखा और फिर उस अंजान इंसान की तरफ। उसकी नजरों में मैंने सच्चाई की झलक पायी और मेरे हाँ कहने पर उसने साबित कर दिया कि मैं न सिर्फ इस देश की आबोहवा पर बल्कि इसके बाशिंदो की नीयत पर भी पूरा भरोसा कर सकता हूं। ... और वक्त गुजरता गया। श्रीवास्तव ने मेरे उजड़े हुए जीवन में फिर से बहार ला दी। कितना निःस्वार्थ है वह, उसे न तो अपने वजूद का गुमान है और न उसके मन में ऐसी कोई सोच है जिसमें लेस मात्र भी भेदभाव हो। इतने मुकम्मल वजूद का आदमी हर रोज एक अदने से मजदूर की बेटी को अपनी गोद में उठाकर कहा करता था- "खां! कुदरत अपने बनाए हुए इन छोटे-छोटे खिलौनों को बड़े क्यों कर देती है? क्या कभी ऐसा भी दिन आएगा, जब मैं इस नन्हीं-मुन्नी को अपनी गोद में उठाकर नहीं खिला सकुँगा?" ..... और उसके प्रश्न का जब मैंने जवाब खोजा तो केवल यह पाया कि क्या कुदरत इस इंसान की इंसानियत में ही समाई हुई है!

वक्त के साथ श्रीवास्तव की मदद से मुझे न सिर्फ गुजारे का साधन मयस्सर हुआ बल्कि उसने भारतीय दर्शन की सौम्य यथार्थपरकता का ऐसा एहसास कराया कि मैं आचरण से शुद्ध भारतीय बन गया। ऐसे में इस देश को छोड़कर जाने का तो प्रश्न ही खत्म हो गया था। खां अपनी बात पूरी कर पाते हैं कि तभी रियाज (खां का छोटा बेटा) उन दोनों की बातों के बीच हस्तक्षेप करते हुए कहता है - सिमी क्या आज कॉलिज नहीं चलना है? अगर तुझे याद रहा हो तो हमारे प्यारे श्रीवास्तव अंकल आज हमे आखिरी बार अटेन्ड करेगें!

क्यो?... रियाज की बात सुनकर खां पूछते हैं!

क्योंकि आज कॉलिज में हमारा विदाई समारोह है पापा। आपको इस बात से सुकून मिलना चाहिए कि अब आपकी जिम्मेदारियाँ बाँटने के लिए आपकी औलाद तैयार है। ... सिमी उन्हें भावपूर्ण उत्तर देती है। लेकिन वह रियाज से उसके बात कहने के ढंग पर अपनी नाराजगी जाहिर करते हुए नसीहत देते हैं- आदमी का व्यवहार समाज में उसके

चरित्र का आयीना होता है रियाज। इसलिए मेरी तुम्हे यह नसीहत है कि हमे समाज द्वारा निर्धारित मर्यादाओं के प्रति उत्तरदायी होने ही चाहिए। मैं यह बात सिर्फ आज के लिए ही नहीं कह रहा हूँ। अक्सर तुम्हारा संस्कारों के विरूद्ध रहना मुझे अच्छा नहीं लगता है।
लेकिन आज तो मैंने ऐसा कुछ नहीं कहा है पापा! वह प्रतिवाद करता है।
ऐसा तुम सिर्फ अपनी अज्ञानतावश कह रहे हो। क्योंकि तुमने अपने श्रीवास्तव अंकल द्वारा खुद को आखिरी बार अटेन्ड करने की जो बात कही है क्या वह तुम्हें उन संस्कारों के विरूद्ध नहीं कर देती है जिन्हें इस अजीम मुल्क में सीखकर मैंने हमेशा तुम लोगों के विचारों में रोपने का प्रयास किया है। श्रीवास्तव तुम लोगों के गुरू हैं, क्या तुम आज तक इस बात को नहीं समझ सके हो कि शिष्य की अव्यावहारिकता गुरू की योग्यता का भी अपमान करती है?
लेकिन मैंने इतना गम्भीर अपराध तो नहीं किया है जिसके लिए आप मुझे इस कद्र डांट रहे हैं!

क्रमशः ...

1000. किसी निष्कर्ष तक पहुँचने में परिभाषाएं बहुत उपयोगी होती हैं। परिभाषाएं विचार-मंथन से निकली किसी विश्वसनीय अनुसंधान इकाई द्वारा घोषित होनी चाहिए। यदि प्रचलित परिभाषा गलत हो, तो उस आधार पर निकले निष्कर्ष का गलत होना निश्चित होता है। वर्तमान विश्व में प्रचलित सामाजिक व्यवस्थाओं के लिए उत्तरदायी अनेक परिभाषाएं या तो असत्य हैं या विकृत हैं।

www.Margdarshak.info